1954G Bridge builders and Milestone markers

Tirth and Tirthankar (In Anekant 1954 August)

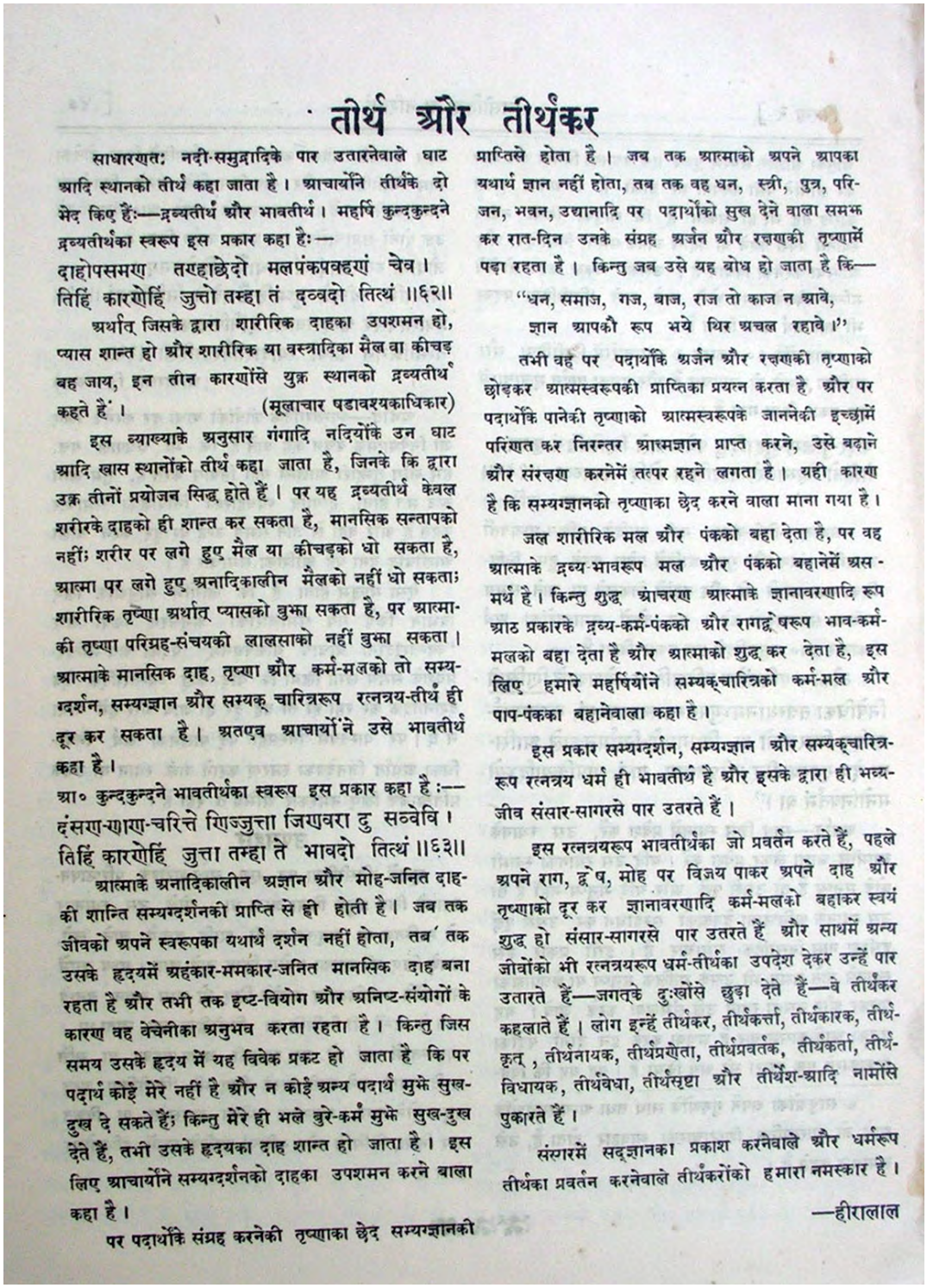

तीर्थ और तीर्थंकर

साधारणतः नदी-समुद्रादिके पार उतारनेवाले घाट आदि स्थानको तीर्थ कहा जाता है। आचार्योंने तीर्थके दो भेद किए हैं:—द्रव्यतीर्थ और भावतीर्थ। महर्षि कुन्दकुन्दने द्रव्यतीर्थका स्वरूप इस प्रकार कहा है:—

दाहोपसमण तण्हाछेदो मलपंकपवहणं चेव।
तिहिं कारणेहिं जुत्तो तम्हा तं दव्वदो तित्थं ॥६२॥

अर्थात् जिसके द्वारा शारीरिक दाहका उपशमन हो, प्यास शान्त हो और शारीरिक या वस्त्रादिका मैल वा कीचड़ बह जाय, इन तीन कारणोंसे युक्त स्थानको द्रव्यतीर्थ कहते हैं। (मूलाचार षडावश्यकाधिकार)

इस व्याख्याके अनुसार गंगादि नदियोंके उन घाट आदि खास स्थानोंको तीर्थ कहा जाता है, जिनके कि द्वारा उक्त तीनों प्रयोजन सिद्ध होते हैं। पर यह द्रव्यतीर्थ केवल शरीरके दाहको ही शान्त कर सकता है, मानसिक सन्तापको नहीं; शरीर पर लगे हुए मैल या कीचड़को धो सकता है, आत्मा पर लगे हुए अनादिकालीन मैलको नहीं धो सकता; शारीरिक तृष्णा अर्थात् प्यासको बुझा सकता है, पर आत्माकी तृष्णा परिग्रह-संचयकी लालसाको नहीं बुझा सकता। आत्माके मानसिक दाह, तृष्णा और कर्म-मलको तो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्ररूप रत्नत्रय-तीर्थ ही दूर कर सकता है। अतएव आचार्योंने उसे भावतीर्थ कहा है।

आ० कुन्दकुन्दने भावतीर्थका स्वरूप इस प्रकार कहा है:—

दंसण-णाण-चरित्ते णिज्जुत्ता जिणवरा दु सव्वेवि।
तिहिं कारणेहिं जुत्ता तम्हा ते भावदो तित्थं ॥६३॥

आत्माके अनादिकालीन अज्ञान और मोह-जनित दाहकी शान्ति सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति से ही होती है। जब तक जीवको अपने स्वरूपका यथार्थ दर्शन नहीं होता, तब तक उसके हृदयमें अहंकार-ममकार-जनित मानसिक दाह बना रहता है और तभी तक इष्ट-वियोग और अनिष्ट-संयोगों के कारण वह बेचैनीका अनुभव करता रहता है। किन्तु जिस समय उसके हृदय में यह विवेक प्रकट हो जाता है कि पर पदार्थ कोई मेरे नहीं है और न कोई अन्य पदार्थ मुझे सुख-दुख दे सकते हैं; किन्तु मेरे ही भले बुरे-कर्म मुझे सुख-दुख देते हैं, तभी उसके हृदयका दाह शान्त हो जाता है। इस लिए आचार्योंने सम्यग्दर्शनको दाहका उपशमन करने वाला कहा है।

पर पदार्थोंके संग्रह करनेकी तृष्णाका छेद सम्यग्ज्ञानकी प्राप्तिसे होता है। जब तक आत्माको अपने आपका यथार्थ ज्ञान नहीं होता, तब तक वह धन, स्त्री, पुत्र, परिजन, भवन, उद्यानादि पर पदार्थोंको सुख देने वाला समझ कर रात-दिन उनके संग्रह अर्जन और रक्षणकी तृष्णामें पड़ा रहता है। किन्तु जब उसे यह बोध हो जाता है कि—

"धन, समाज, गज, बाज, राज तो काज न आवे,
ज्ञान आपको रूप भये थिर अचल रहावे।"

तभी वह पर पदार्थोंके अर्जन और रक्षणकी तृष्णाको छोड़कर आत्मस्वरूपकी प्राप्तिका प्रयत्न करता है और पर पदार्थोंके पानेकी तृष्णाको आत्मस्वरूपके जाननेकी इच्छामें परिणत कर निरन्तर आत्मज्ञान प्राप्त करने, उसे बढ़ाने और संरक्षण करनेमें तत्पर रहने लगता है। यही कारण है कि सम्यग्ज्ञानको तृष्णाका छेद करने वाला माना गया है।

जल शारीरिक मल और पंकको बहा देता है, पर वह आत्माके द्रव्य-भावरूप मल और पंकको बहानेमें असमर्थ है। किन्तु शुद्ध आचरण आत्माके ज्ञानावरणादि रूप आठ प्रकारके द्रव्य-कर्म-पंकको और रागद्वेषरूप भाव-कर्म-मलको बहा देता है और आत्माको शुद्ध कर देता है, इस लिए हमारे महर्षियोंने सम्यक्चारित्रको कर्म-मल और पाप-पंकका बहानेवाला कहा है।

इस प्रकार सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्ररूप रत्नत्रय धर्म ही भावतीर्थ है और इसके द्वारा ही भव्य-जीव संसार-सागरसे पार उतरते हैं।

इस रत्नत्रयरूप भावतीर्थका जो प्रवर्तन करते हैं, पहले अपने राग, द्वेष, मोह पर विजय पाकर अपने दाह और तृष्णाको दूर कर ज्ञानावरणादि कर्म-मलको बहाकर स्वयं शुद्ध हो संसार-सागरसे पार उतरते हैं और साथमें अन्य जीवोंको भी रत्नत्रयरूप धर्म-तीर्थका उपदेश देकर उन्हें पार उतारते हैं—जगत्के दुःखोंसे छुड़ा देते हैं—वे तीर्थंकर कहलाते हैं। लोग इन्हें तीर्थंकर, तीर्थकर्त्ता, तीर्थकारक, तीर्थकृत्, तीर्थनायक, तीर्थप्रणेता, तीर्थप्रवर्तक, तीर्थकर्ता, तीर्थविधायक, तीर्थवेधा, तीर्थसृष्टा और तीर्थेश-आदि नामोंसे पुकारते हैं।

संसारमें सद्ज्ञानका प्रकाश करनेवाले और धर्मरूप तीर्थका प्रवर्तन करनेवाले तीर्थंकरोंको हमारा नमस्कार है।

—हीरालाल